हरतालिका तीज (तीजों) की कथा

जिनके दिव्य केशों पर मन्दार (आक) के पुष्पों की माला शोभा देती है और जिन भगवान शंकर के मस्तक पर चन्द्र और कण्ठ में मुण्डों की माला पड़ी हुई है, जो माता पार्वती दिव्य वस्त्रों से तथा भगवान शंकर दिगम्बर वेष धारण किये हैं, उन दोनों भवानी-शंकर को नमस्कार करता हूँ।

कैलाश पर्वत के सुन्दर शिखर पर माता पार्वती जी ने श्री महादेव जी से पूछा-हे महेश्वर! मुझ से आप वह गुप्त से गुप्त वार्ता कहिये जो सबके लिए सब धर्मों से भी सरल तथा महान फल देने वाली हो। हे नाथ! यदि आप भली-भाँति प्रसन्न हैं तो आप उसे मेरे सम्मुख प्रकट कीजिये। हे जगत नाथ! आप आदि, मध्य और अन्त रहित हैं, आपकी माया का कोई पार नहीं है। आपको मैंने किस भाँति प्राप्त किया है? कौन से व्रत, तप या दान के पुण्य फल से आप मुझको वर रूप में मिले?

श्री महादेव जी बोले-हे देवी! यह सुन,मैं तेरे सम्मुख उस व्रत को कहता हूँ, जो परम गुप्त है, जैसे तारागणों में चन्द्रमा और ग्रहों में सूर्य, वर्णों में ब्राह्मण, देवताओं में गंगा, पुराणों में महाभारत, वेदों में साम और इन्द्रियों में मन श्रेष्ठ है। वैसे ही पुराण और वेद सबमें इसका वर्णन आया है। जिसके प्रभाव से तुमको मेरा आधा आसन प्राप्त हुआ है। हे प्रिये! उसी का मैं तुमसे वर्णन करता हूँ, सुनो-भाद्रपद (भादों) मास के शुक्लपक्ष की हस्त नक्षत्र संयुक्त तृतीया (तीज) के दिन इस व्रत का अनुष्ठान मात्र करने से सब पापों का नाश हो जाता है। तुमने पहले हिमालय पर्वत पर इसी महान व्रत को किया था, जो मैं तुम्हें सुनाता हूँ। पार्वती जी बोलीं- हे प्रभु इस व्रत को मैंने किसलिए किया था, यह मुझे सुनने की इच्छा है सो, कृपा करके कहिये।

शंकर जी बोले-आर्यावर्त में हिमालय नामक एक महान पर्वत है, जहाँ अनेक प्रकार की भूमि अनेक प्रकार के वृक्षों से सुशोभित है, जो सदैव बर्फ से ढके हुए तथा गंगा की कल-कल ध्वनि से शब्दायमान रहता है। हे पार्वती जी! तुमने बाल्यकाल में उसी स्थान पर परम तप किया था और बारह वर्ष तक के महीने में जल में रहकर तथा बैशाख मास में अग्नि में प्रवेश करके तप किया। श्रावण के महीने में बाहर खुले में निवास कर अन्न त्याग कर तप करती रहीं। तुम्हारे उस कष्ट को देखकर तुम्हारे पिता को बड़ी चिन्ता हुई। वे चिन्तातुर होकर सोचने लगे कि मैं इस कन्या की किससे शादी करुँ? इस अवसर पर दैवयोग से ब्रह्मा जी के पुत्र नारद जी वहाँ आये। देवर्षि नारद ने तुम शैलपुत्री को देखा। तुम्हारे पिता हिमालय ने देवर्षि को अर्घ्य, पाद्य, आसन देकर सम्मान सहित बिठाया और कहा-हे मुनीश्वर! आपने यहाँ तक आने का कष्ट कैसे किया, कहिये क्या आज्ञा है? नारद जी बोले-हे गिरिराज! मैं विष्णु भगवान का भेजा हुआ यहाँ आया हूँ। तुम मेरी बात सुनो। आप अपनी कन्या को उत्तम वर को दान करें। ब्रह्मा, इन्द्र, शिव आदि देवताओं में विष्णु भगवान के समान कोई भी उत्तम नहीं है। इसलिए मेरे मत से आप अपनी कन्या का दान भगवान

विष्णु को ही दें। हिमालय बोले-यदि भगवान वासुदेव स्वयं ही कन्या को ग्रहण करना चाहते हैं और इस कार्य के लिए ही आपका आगमन हुआ है तो वह मेरे लिए गौरव की बात है। मैं अवश्य उन्हें ही दूँगा। हिमालय का यह आश्वासन सुनते ही देवर्षि नारद जी आकाश में अन्तर्धान हो गये और शंख, चक्र, गदा, पद्म एवं पीताम्बरधारी भगवान विष्णु के पास पहुँचे।

नारद जी ने हाथ जोड़कर भगवान विष्णु से कहा-प्रभु! आपका विवाह कार्य निश्चित हो गया है। इधर हिमालय ने पार्वती जी से प्रसन्नता पूर्वक कहा-हे पुत्री मैंने तुमको गरुड़ध्वज भगवान विष्णु को अर्पण कर दिया है। पिता के इन वाक्यों को सुनते ही पार्वती जी अपनी सहेली के घर गईं और पृथ्वी पर गिरकर अत्यन्त दुखित होकर विलाप करने लगीं।

उनको विलाप करते हुए देखकर सखी बोली-हे देवी! तुम किस कारण से दु:ख पाती हो, मुझे बताओ। मैं अवश्य ही तुम्हारी इच्छा पूर्ण करुँगी। पार्वती बोली-हे सखी! सुन, मेरी जो मन की अभिलाषा है, सुनाती हूँ। मैं श्री महादेव जी को वरण करना चाहती हूँ, मेरे इस कार्य को पिताजी ने बिगाड़ना चाहा है। इसलिये मैं नि:सन्देह इस शरीर का त्याग करुँगी। पार्वती के इन वचनों को सुनकर सखी ने कहा-हे देवी! जिस वन को तुम्हारे पिताजी ने न देखा हो तुम वहाँ चली जाओ। तब हे देवी पार्वती! तुम अपनी सखी का यह वचन सुन ऐसे ही वन को चली गईं। पिता हिमालय ने तुमको घर पर न पाकर सोचा कि मेरी पुत्री को कोई देव, दानव अथवा किन्नर हरण करके ले गया है। मैंने नारद जी को वचन दिया था कि मैं पुत्री का गरुड़ध्वज भगवान के साथ वरण करुँगा। हाय, अब यह कैसे पूरा होगा? ऐसा सोचकर वे बहुत चिंतातुर हो मूर्छित हो गये। तब सब लोग हाहाकार करते हुए दौड़े और मूर्छा दूर होने पर गिरिराज से बोले कि हमें आप अपनी मूर्छा का कारण बताओ। हिमालय बोले-मेरे दु:ख का कारण यह है कि मेरी रत्नरूपी कन्या को कोई हरण कर ले गया या सर्प डस गया या किसी सिंह या व्याघ्र ने मार डाला है। वह ने जाने कहाँ चली गई या उसे किसी राक्षस ने मार डाला है।

इस प्रकार कहकर गिरिराज दु:खित होकर ऐसे कांपने लगे जैसे तीव्र वायु के चलने पर कोई वृक्ष कांपता है। तत्पश्चात हे पार्वती, तुम्हें गिरिराज साथियों सहित घने जंगल में ढूंढने निकले। सिंह, व्याघ्र, रीछ आदि हिंसक जन्तुओं के कारण वन महाभयानक प्रतीत होता था। तुम भी सखी के साथ भयानक जंगल में घूमती हुई वन में एक नदी के तट पर एक गुफा में पहुँची। उस गुफा में तुम आनी सखी के साथ प्रवेश कर गईं। जहाँ तुम अन्न जल का त्याग करके बालू का लिंग बनाकर मेरी आराधना करती रहीं। उस समय पर भाद्रपद मास की हस्त नक्षत्र युक्त तृतीया के दिन तुमने मेरा विधि विधान से पूजन किया तथा रात्रि को गीत गायन करते हुए जागरण किया। तुम्हारे उस महाव्रत के प्रभाव से मेरा आसन डोलने लगा। मैं उसी स्थान पर आ गया; जहाँ तुम और तुम्हारी सखी दोनों थीं। मैंने आकर तुमसे कहा हे वरानने, मैं तुमसे प्रसन्न हूँ, तू मुझसे वरदान मांग। तब तुमने कहा कि हे देव, यदि आप

मुझसे प्रसन्न हैं तो आप महादेव जी ही मेरे पति हों। मैं 'तथास्तु' ऐसा कहकर कैलाश पर्वत को चला गया और तुमने प्रभात होते ही मेरी उस बालू की प्रतिमा को नदी में विसर्जित कर दिया। हे शुभे, तुमने वहाँ अपनी सखी सहित व्रत का पारायण किया। इतने में तुम्हारे पिता हिमवान भी तुम्हें ढूंढते ढूंढते उसी घने वन में आ पहुँचे। उस समय उन्होंने नदी के तट पर दो कन्याओं को देखा तो ये तुम्हारे पास आ गये और तुम्हें हृदय से लगाकर रोने लगे। और बोले-बेटी तुम इस सिंह व्याघ्रादि युक्त घने जंगल में क्यों चली आईं? तुमने कहा हे पिता, मैंने पहले ही अपना शरीर शंकर जी को समर्पित कर दिया था, किन्तु आपने इसके विपरीत कार्य किया। इसलिए मैं वन में चली आई। ऐसा सुनकर हिमवान ने तुमसे कहा कि मैं तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध यह कार्य नहीं करुँगा। तब वे तुम्हें लेकर घर को आये और तुम्हारा विवाह मेरे साथ कर दिया। हे प्रिये! उसी व्रत के प्रभाव से तुमको मेरा अर्द्धासन प्राप्त हुआ है। इस व्रतराज को मैंने अभी तक किसी के सम्मुख वर्णन नहीं किया है।

हे देवी! अब मैं तुम्हें यह बताता हूँ कि इस व्रत का यह नाम क्यों पड़ा? तुमको सखी हरण करके ले गई थी, इसलिए हरतालिका नाम पड़ा। पार्वती जी बोलीं-हे स्वामी! आपने इस व्रतराज का नाम तो बता दिया किन्तु मुझे इसकी विधि एवं फल भी बताइये कि इसके करने से किस फल की प्राप्ति होती है। तब भगवान शंकर जी बोले-इस स्त्री जाति के अत्युत्तम व्रत की विधि सुनिये। सौभाग्य की इच्छा रखने वाली स्त्रियां इस व्रत को विधि पूर्वक करें। केले के खम्भों से मण्डप बनाकर उसे वन्दनवारों से सुशोभित करें। उसमें विविध रंगों के उत्तम रेशमी वस्त्र की चाँदनी ऊपर तान दें। चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्यों का लेपन करके स्त्रियां एकत्र हों। शंख, भेरी, मृदंग आदि बजावें। विधि पूर्वक मंगलाचार करके श्री गौरी-शंकर की बालू निर्मित प्रतिमा स्थापित करें। फिर भगवान शिव पार्वती जी का गन्ध, धूप, पुष्प आदि से विधिपूर्वक पूजन करें। अनेकों नैवेद्यों का भोग लगावें और रात्रि को जागरण करें। नारियल, सुपारी, जंवारी, नींबू, लौंग, अनार, नारंगी आदि ऋतुफलों तथा फूलों को एकत्रित करके धूप, दीप आदि से पूजन करके कहें-हे कल्याण स्वरूप शिव! हे मंगलरूप शिव! हे मंगल रूप महेश्वरी! हे शिवे! सब कामनाओं को देने वाली देवी कल्याण रूप तुम्हें नमस्कार है। कल्याण स्वरुप माता पार्वती, हम तुम्हें नमस्कार करते हैं। भगवान शंकर जी को सदैव नमस्कार करते हैं। हे ब्रह्म रुपिणी जगत का पालन करने वाली ''मां'' आपको नमस्कार है। हे सिंहवाहिनी! मैं सांसारिक भय से व्याकुल हूँ, तुम मेरी रक्षा करो। हे महेश्वरी! मैंने इसी अभिलाषा से आपका पूजन किया है। हे पार्वती माता आप मेरे ऊपर प्रसन्न होकर मुझे सुख और सौभाग्य प्रदान कीजिए। इस प्रकार के शब्दों द्वारा उमा सहित शंकर जी का पूजन करें। विधिपूर्वक कथा सुनकर गौ, वस्त्र, आभूषण आदि ब्राह्मणों को दान करें। इस प्रकार से व्रत करने वाले के सब पाप नष्ट हो जाते हैं।